Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 GISRRJ | Volume 4 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

ऋग्वेद में लोक–कल्याण की भावना

डॉ० उमाकान्त यादव
प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश,भारत।

Article Info
Volume 4 Issue 1
Page Number: 75-79

Publication Issue :
January-February-2021

Article History
Accepted : 15 Jan 2021
Published : 30 Jan 2021

सारांश – ऋग्वेद की ऋचाओं में वर्णित ऋषियों की मानव मात्र के प्रति अतिशय उदार भावना, मैत्री की उत्कृष्ट अवधारणा, एकता, समानता, सहृदयता तथा संगठन का उच्च आदर्श, विश्वजनीन सुमति की परिकल्पना, परस्पर एक दूसरे के कल्याण की भावना, विभिन्न भाषा–भाषी और विविध धर्मों को मानने वाले व्यक्तियों के प्रति सद्भाव, सार्वजनिक कल्याण की भावना एवं समस्त विश्व को आर्य बनाने की परिकल्पना आदि सन्दर्भ ऋग्वेद में अन्तर्निहित लोक–कल्याण की भावना को प्रतिपादित करते हैं।

मुख्य शब्द – ऋग्वेद, ऋचा, लोक–कल्याण, ऋषि, विश्व, वाङ्मय, मैत्री, आदर्श, भाषा, संस्कृत।

विश्व वाङ्मय में प्राचीनता एवं उत्कृष्टता की दृष्टि से ऋग्वेद का सर्वोच्च स्थान है। भारतीय मनीषा के उद्भव–काल में ऋषियों द्वारा जिस ज्ञान–राशि का दर्शन किया गया, उसका अभिधान 'वेद' के रूप में हुआ। ये ज्ञान के वे मानसरोवर हैं, जहाँ से ज्ञान की विमल धारायें विभिन्न मार्गों से प्रवाहित होकर भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व को उर्वर बनाती हैं। हमारे ऋषियों ने वेदों में मानव जीवन के विविध पक्षों की पर्याप्त मीमांसा प्रस्तुत की है उनकी दृष्टि मानव के केवल सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्षों का ही मूल्यांकन नहीं करती अपितु मानवीय नैतिक मूल्यों का भी प्रतिपादन करती है, जिनकी मानव समाज में सर्वाधिक उपादेयता है। लोक–कल्याण की भावना इन्हीं मानवीय नैतिक मान्यताओं में एक विशिष्ट है, जिसके प्रतिपादन की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महती आवश्यकता है। प्राणिमात्र के प्रति कल्याण की भावना मानव जीवन का आदर्श है। ऋग्वैदिक ऋचाओं पर दृष्टिपात करने से ऐसा प्रतीत होता है कि ऋषियों ने प्राकृतिक शक्तियों एवं उनके उपादानों से लोक–कल्याण की नैतिक प्रेरणा ग्रहण की, जिसकी अभिव्यक्ति हमें भिन्न–भिन्न रूपों में परिलक्षित होती है।

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

ऋग्वेद में समाज एवं प्राणिमात्र के प्रति उदात्त भावना के दर्शन होते हैं। वेदों में वर्णित ऋषियों की मानव मात्र के प्रति अतिशय उदार भावनाओं को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनके हृदय में लोक–कल्याण की भावना के बीज विद्यमान थे, जिनका प्रस्फुटन एकता, समानता, सहृदयता, संगठन एवं लोक–कल्याण की भावना आदि के रूप में दृष्टिगत होता है। प्राणिमात्र के प्रति कल्याण की भावना मानव–जीवन का आदर्श है। ऐसा प्रतीत होता है कि ऋषियों ने प्राकृतिक शक्तियों एवं उनके उपादानों से लोक–कल्याण की नैतिक प्रेरणा ग्रहण की, जिनकी अभिव्यक्ति हमें भिन्न–भिन्न रूपों में परिलक्षित होती है। वैदिक ऋचाओं में प्राप्त संदर्भो के आधार पर ऋग्वेद में अन्तर्निहित लोक–कल्याण की भावना को इन रूपों में अवधारित किया जा सकता है –

ऋग्वेद में प्राणिमात्र के प्रति अतिशय उदार भावनायें परिलक्षित होती हैं जिनमें लोक–कल्याण की भावना का उत्स देखा जा सकता है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में समस्त द्विपाद एवं चतुष्पाद प्राणियों के कल्याण की कामना की गई है – **शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।**[1] ऋग्वेद के एक अन्य मन्त्र में इन प्राणियों के कल्याण के साथ–साथ समस्त विश्व के स्वास्थ्य एवं आरोग्य की कामना की गयी है – यथा **शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम्।**[2] यजुर्वेद के एक मन्त्र में समस्त समाज के प्रति तेजस्विता की प्रार्थना की गयी है।[3] अथर्ववेद में सम्पूर्ण संसार के प्रति कल्याण का भाव प्रदर्शित किया गया है – **स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः।**[4] अथर्ववेद के एक अन्य मन्त्र में लोक–कल्याण की भावना को व्यक्त करते हुए कहा गया है कि चाहे शूद्र हो या आर्य, सबका प्रिय देखो – **प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये।**[5]

वैदिक ऋचाओं में मैत्री की उदात्त भावनाओं का दिग्दर्शन होता है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में देवताओं से मित्रता स्थापित करने की कामना की गयी है – **देवानां सख्यमुपसेदिमा वयम्।**[6] एक अन्य मन्त्र में अग्नि से प्रार्थना की गयी है कि तुम उसी प्रकार कल्याण करने वाला बनो जिस प्रकार मित्र कल्याण करता है – **मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने।**[7] अन्यत्र अग्नि का आह्वान किया गया है कि हे अग्नि! तुम कल्याणकारी मित्रता के साथ यहाँ आओ – **आ नो गहि सख्येभिः शिवेभिः।**[8] ऋग्वेद के ही एक अन्य मन्त्र में अग्नि से कामना की गयी है कि मनुष्य परस्पर एक दूसरे की प्रशंसा करे – **मर्त्यानाम् मिथः सन्तु प्रशस्तयः।**[9] एक मन्त्र में अग्नि को मानव मात्र का बन्धु, मित्र, प्रिय एवं सखा कहा गया है –

त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः। सखा सखिभ्य ईड्यः।।[10]

एक अन्य मन्त्र में तो विशाल पृथिवी को ही बन्धु कहा गया है – **बन्धुर्मे माता पृथिवी महीयम्।**[11] यजुर्वेद में समस्त प्राणियों को मित्र की भावना से देखने की कामना है कि सभी प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें, मैं सभी भूतों को मित्र की दृष्टि से देखूँ और हम परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें – **मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।**[12] अथर्ववेद में कामना

है कि जितनी भी दिशायें हैं वे सब मेरी मित्र हो जायें – **सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।**[13] इस तरह वैदिक ऋचाओं में वर्णित ऋषियों की मैत्री के प्रति उदात्त भावनायें इस तथ्य की द्योतक हैं कि उनके हृदय में विश्वमैत्री का भाव विद्यमान था।

ऋग्वेद के दशम मण्डल के एक सौ इक्यान्वेवें सूक्त में वर्णित मन, वचन एवं कर्म से एकता की भावना 'विश्व बन्धुत्व' को ही रेखांकित करती है। इस सूक्त के प्रथम मन्त्र में परमात्मा को संसार के समन्वयक के रूप में वर्णित किया गया है। वह सबको मिलाता है। समस्त विश्व में परमात्मा वैश्वानर अग्नि के रूप में विद्यमान है। सभी परमात्मा के पुत्र हैं। अतः सभी में एकत्व की भावना उदित होती है।[14] इसी सूक्त के दूसरे मन्त्र में अवधारित है कि जिस प्रकार देव एक मत होकर हवि ग्रहण करते हैं उसी प्रकार हम सभी साथ–साथ चलें, मिलकर बोलें और हमारे मन एक समान हों –

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जायताम्।

देवाभागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।।[15]

यहाँ ध्यातव्य है कि प्राचीन ऋषि एकता को विश्व–कल्याण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उनका उद्घोष है कि यदि साथ चलोगे,मिलकर बोलोगे और एकत्व बुद्धि रखोगे तो सतत् प्रगति के पथ पर अग्रसर रहोगे। साथ ही व्यष्टि एवं समष्टि दोनों दृष्टियों से सुख–शान्ति एवं माधुर्य बना रहेगा।

ऋषियों ने सभी की मन्त्रणाओं, समितियों, विचारों एवं चिन्तनों में एकता एवं समानता लाने का उद्घोष किया है कि सबकी मन्त्रणा (विचार) एक समान हो, समिति (सभा) एक समान हो, सबका मन समान हो और चित्त (चिन्तन) भी समान हो – **समानो मन्त्रः समिति समानी,समानं मनः सह चित्तमेषाम्।**[16] उन्होंने अगले मन्त्र में समान संकल्प, समान हृदय तथा समान मन की भी कामना की है –

समानी व आकूतिः, समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो, यथा व सुसहासति।।[17]

अर्थात् तुम्हारे संकल्प समान हों, तुम्हारे हृदय समान हों, तुम्हारे मन समान हों जिससे तुम्हारा संगठन हो। सहृदयता एवं सामञ्जस्य की यह भावना अथर्ववेद में भी प्राप्त होती है। वहाँ परमात्मा का कथन है कि मनुष्यों में सहृदयता,सौमनस्यता और द्वेषहीनता तुम्हारे लिए उत्पन्न करता हूँ – **सहृदयं सामनस्यम् अविद्वेषं कृणोमि वः।**[18] इस तरह ऋषियों द्वारा परिकल्पित एकता, समानता, सहृदयता एवं संगठन का यह वैदिक आदर्श विश्व को एक परिवार की भावना को परिपुष्ट करता हुआ परिलक्षित होता है।

ऋग्वेद में वर्णित **'विश्वजनीन सुमति'** की परिकल्पना में भी लोक–कल्याण की भावना को देखा जा सकता है। विश्वजनीन सुमति का तात्पर्य है – जिस सद्बुद्धि की प्राप्ति से विश्व का कल्याण हो और सभी प्राणियों के सुख में वृद्धि हो। ऋग्वेद के एक मन्त्र में अग्नि को सम्बोधित करते हुए कहा गया है

कि हे जातवेद! आप हमें विश्वजनीन सुमति एवं कल्याणकारक धन प्रदान करो – **तामस्मभ्यं प्रमतिं जातवेदो वसो रास्व सुमतिं विश्वजन्याम्**।[19] विष्णु को सम्बोधित एक अन्य मन्त्र में विश्वजनीन सुमति की कामना की गयी है कि हे विष्णो ! तुम हमें विश्वजनीन सुमति प्रदान करो – **त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्याम् अप्रयुतामेवयावो मतिं दाः।**[20] यजुर्वेद में भी सविता की विचित्र विश्वजनीन सुमति को वरण करने का कथन है – **ताँ सवितुर्वरेण्यस्य चित्राम्, आहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्।**[21]

परस्पर एक दूसरे के कल्याण एवं रक्षा के लिए तत्पर रहना 'लोक–कल्याण' का प्रमुख आधार है। वैदिक ऋषियों ने इस परिकल्पना को साकार रूप देने का प्रयास किया। ऋग्वेद, यजुर्वेद, तैत्तिरीय संहिता एवं निरुक्त में वर्णित एक मंत्र में कहा गया है कि प्रत्येक पुरुष दूसरे पुरुष की सब ओर से रक्षा करे– **पुमान् पुमांसं परि पातु विश्वतः।**[22]

अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में पृथिवी को विभिन्न भाषा और विविध धर्मों के मानने वाले लोगों को एक परिवार के तुल्य धारण करने वाली कहा गया है –

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं, नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।[23]

इस मन्त्र के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पृथिवी पर नाना भाषा–भाषी एवं विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं। पृथिवी भाषा–भेद और धर्म–भेद से किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं करती है। ये पृथिवी के लिए एक परिवार के व्यक्ति हैं। अतएव पृथिवी पर रहने वाले सभी व्यक्तियों का कर्तव्य है कि वे भाषा–भेद और धर्म–भेद के आधार पर कोई भेदभाव न करें और अन्य भाषा–भाषी एवं धर्म के लोगों को परिवार का अंग स्वीकार कर उनके प्रति सद्भावना व्यक्त करें। सबमें पारिवारिक सद्भावना उत्पन्न होने पर लोक–कल्याण की भावना निश्चित रूप से बलवती होगी। एक अन्य मन्त्र में स्पष्ट निर्देश है कि भाई–भाई से द्वेष न करे और बहिन–बहिन से द्वेष न करे। समान विचार एवं समान कर्म वाला होकर कल्याणप्रद वार्तालाप करो–

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षत् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्च सव्रता भूत्वा, वाचं वदते भद्रया।।[24]

इसी तरह ऋग्वेद के एक मन्त्र में समस्त विश्व को आर्य बनाने का कथन है – **कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।**[25] वैदिक ऋषियों की इस परिकल्पना में भी लोक–कल्याण का भाव ही दृष्टिगत होता है।

इस तरह ऋग्वेद की ऋचाओं में वर्णित ऋषियों की मानव मात्र के प्रति अतिशय उदार भावना, मैत्री की उत्कृष्ट अवधारणा, एकता, समानता, सहृदयता तथा संगठन का उच्च आदर्श, विश्वजनीन सुमति की परिकल्पना, परस्पर एक दूसरे के कल्याण की भावना, विभिन्न भाषा–भाषी और विविध धर्मों को मानने वाले

व्यक्तियों के प्रति सद्भाव, सार्वजनिक कल्याण की भावना एवं समस्त विश्व को आर्य बनाने की परिकल्पना आदि सन्दर्भ ऋग्वेद में अन्तर्निहित लोक–कल्याण की भावना को प्रतिपादित करते हैं।

सन्दर्भ–

1. ऋ. 7.54.1
2. ऋ. 1.114.1
3. यजु. 18.48
4. अथर्व. 1.31.4
5. अथर्व. 19.62.1
6. ऋ. 1.89.2
7. ऋ. 1.58.6
8. ऋ. 3.1.19
9. ऋ. 1.29.9
10. ऋ. 1.75.4
11. ऋ. 1.164.33
12. यजु. 36.18
13. अथर्व. 19.15.6
14. वेदामृतः सुखी समाज, पृ0 64–65
15. ऋ. 10.191.2
16. ऋ. 10.191.3
17. ऋ. 10.191.4
18. अथर्व. 3.30.1
19. ऋ. 3.57.6
20. ऋ. 7.100.2
21. यजु. 17.74
22. ऋ. 6.75.14, यजु. 29.51, तैति.सं. 4.6.6.5, निरुक्त 9.15
23. अथर्व. 12.145
24. अथर्व. 3.30.3
25.ऋ. 9.63.5